Rasmaya difference Rādhā, Lakṣmī, Rukmiṇī

परमात्मा की परावस्था- ठाकुरजी और प्रेम की परावस्था- श्रीमती राधारानी।

अब यह सोच सकते हैं जैसे सीता-राम, जैसे रुक्मिणी-द्वारकाधीश, जैसे लक्ष्मी-नारायण, वैसे ही राधाकृष्ण।
न... न... न... न... न... यह भूल में मत रहना।

लक्ष्मी, रुक्मिणी, इन सबको हमारी ठकुरानी, हमारी स्वामिनी से... स्वामिनी से... स्वामिनी हमारी बिल्कुल अलग हैं। हमारे ठाकुरजी भी बिल्कुल अलग हैं और स्वामिनी तो बिल्कुल ही अलग हैं।

कोटी-कोटी लक्ष्मियाँ, रमा, सती, सची, सावित्री, ये राधारानी के चरणकमल से निकली हुए जो कांति है उसके अन्दर हज़ारों-करोड़ो लक्ष्मियाँ बह जाती हैं। लक्ष्मियाँ, जो सौन्दर्य में और सौभाग्य में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती हैं। हम लक्ष्मी की कामना करते हैं? राधारानी की चरणनख कांति की मादनरस सिन्धु की धारा के प्रवाह में करोड़ों लक्ष्मियाँ बह जाती हैं। ये हमारी राधारानी हैं।

कोई सोचे कि रुक्मिणी इत्यादि से या किसी लक्ष्मी से राधारानी को आप तुलनात्मक, तुलना भी कर सकते हैं कुछ? उदाहरण ही नहीं दे सकते राधारानी का। विश्व में ऐसी कोई भाषा ही उत्पन्न नहीं हुई कि राधारानी का उदाहरण दिया जा सके। अच्छा दोगे तो किससे दोगे, सर्वश्रेष्ठ किसको समझ सकते हो सुन्दरता में? किससे दोगे? लक्ष्मी बोलो अन्त में आकर।

यह जो लक्ष्मी हैं, यह राधारानी के... राधारानी जो हैं प्रेम की अन्तिम सीमा हैं, अन्तिम सीमा प्रेम की। अब, राधारानी जो हैं महाभाव... रुची-आसक्ति-भाव-प्रेम, इससे ऊपर चले जाएँ, स्नेह-प्रणय-मान-भाव-महाभाव। यह महाभाव की परम अवस्था जो हैं ये राधारानी हैं। और जो लक्ष्मी हैं, वह कोशिश करती हैं कि, श्रीकृष्ण का माधुर्य इतना आकर्षक है, कि वे कोशिश करती हैं कि उन्हें एक गोपी बनने का सौभाग्य प्राप्त हो जाए, इसलिए वे नारायण का वक्ष त्याग कर, नारायण का जो स्थान है उसको त्याग कर वे तपस्या करती हैं वृन्दावन में, किसलिए? कि "जिस प्रकार से करोड़ो गोपियाँ हैं न वैसी मैं गोपी बन जाऊँ। यह सौभाग्य मुझे प्राप्त हो जाए।" यह लक्ष्मी इस बात के लिए तपस्या करती हैं। क्या करती हैं?

नारायण का वक्ष, वक्षविलासिनी हैं न नारायण की, लक्ष्मी नारायण, उनका वक्ष त्याग देती हैं। किसलिए? श्रीकृष्ण का माधुर्य इतना ज़्यादा है, इतना प्रलोभनीय है कि उनका वक्ष त्याग कर वे तपस्या करती हैं गोपी बन जाएँ। लेकिन त्यागने के बाद भी वे श्रीकृष्ण को गोपी के रूप में भी प्राप्त नहीं कर पाती हैं। क्यों? इसका उत्तर बताया जाता है-

"गोपी अनुगति विना ऐश्वर्य ज्ञाने।
भजिलेह नाहि पाए व्रजेन्द्र-नन्दने।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला ८.१८५)

"नाहि पाए ब्रजेन्द्र-नन्दने"। गोपियाँ कितनी हैं? करोड़ों-करोड़ों गोपियाँ हैं। उन सबको कौन प्राप्त हैं? श्रीकृष्ण! पर, *"लक्ष्मी नाहि पाए ब्रजेन्द्रनन्दने"*, लक्ष्मी को नहीं प्राप्त हैं। क्यों?

"ताहाते दृष्टान्त-लक्ष्मी करिला भजन।
तथापि ना पाइल ब्रजे ब्रजेन्द्रनन्दन।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला ८.१८६)

क्योंकि उन्होंने गोपियों की अनुगति स्वीकार नहीं करी, तो गोपियों में जो महाभाव की एक बूंद विराजमान है... गोपियों के अन्दर महाभाव है, राधारानी महाभाव स्वरूपा हैं। तो जो महाभाव विराजमान जो गोपियों में है, वे एक बूंद की कामना के लिए तपस्या कर रही हैं अनन्तकाल से और वे तपस्या में सफल नहीं हो पाई हैं कि एक बूंद महाभाव की प्राप्त हो जाए जो करोड़ो गोपियों के पास है। इसे कहते हैं ब्रज लक्ष्मी का वैभव। ब्रज लक्ष्मी का वैभव।

और लक्ष्मी तपस्या करने के बाद गोपी नहीं बन पाई। और करोड़ो-करोड़ो गोपियाँ जो हैं, इनका जो समष्टि का जो माधुर्य है, गोपियों का जो सब माधुर्य है, वह करोड़ों गोपियों को अगर इकट्ठा कर लिया जाए तो वह राधारानी के चरणप्रांतों से निकले हुए जो मादनरस महासिन्धु जो प्रवाह होता रहता है उसका एक कणिका जो है वह कोटि-कोटि ब्रज लक्ष्मियों का स्पृहनीय है। उनकी पूजा करती हैं। वे चाहती हैं वह प्राप्त हो जाए उनको। काम्य है उनके वह। एक कणिका उस महाभाव सिन्धु की, जो राधारानी से निरन्तर प्रवाहित होता रहता है, उसकी एक

कणिका की उपासना करती हैं सारी गोपियाँ। और लक्ष्मी जो है वह प्राप्त करना चाहती हैं जो करोड़ो ब्रज लक्ष्मियों को प्राप्त हैं, पर प्राप्त कर नहीं पाई हैं।

जो गोपियाँ हैं और जो लक्ष्मी हैं और राधारानी हैं, इनका भेद समझना बहुत ज़रूरी है। नहीं तो हम सही रूप से, वास्तव से हृदय से प्रार्थना नहीं कर पाएँगे, जप नहीं कर पाएँगे। हमें भेद मालूम होगा अच्छे से तो हम पूर्ण रूप से शरणागत हो पाएँगे। बलिहारी... वारे जाएँगे, अपने आप को वार कर फेंक देंगे। अभी हमें राधारानी समझ आ जाए कि वे कौन हैं।

लक्ष्मी जो हैं नारायण के चरण दबाती हैं हमेशा। और यह ब्रज में क्या होता है? वे अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक, उनको राधारानी के चरणों में महावर लगाने की सेवा मिल जाए ! क्या सोचेंगे? अखिल कोटि ब्रह्माण्ड नायक, जिनके अंश के अंश के अंश के अंश परमात्मा हैं, वे किसी स्त्री के ऊपर महावर लगा रहे हैं?? नहीं, वे स्त्री नहीं हैं। *राधा कृष्ण दोनों एकई स्वरूप।*

"राधा कृष्ण ऐछे सदा एकई स्वरूप।
लीलारस आस्वादिते धरे दुइ रूप।।"
(श्री श्री चैतन्य चरितामृत आदि लीला ४.८५)

वे एक हैं, रस आस्वादन माधुरी के लिए अलग हुए हैं।

राधारानी की जो श्रीअंग माधुरी है वह श्रीकृष्ण को वशीभूत करने में पूर्ण समर्थ है। राधारानी की श्रीअंग माधुरी ! अरे ! एक छटा में बह जाएगा कोई भी। एक छटा में... यह जो माधुरी है, यह कोई स्त्री-पुरुष जनित सौन्दर्य नहीं है उनका, रूप माधुरी नहीं है। यह प्रेम से उत्पन्न माधुरी है। कौन सा प्रेम? राधारानी जो हैं, वे मादनाख्य महाभाव की मूर्ति हैं, मूर्ति ! वह प्रेम जो है, वह ही श्रीकृष्ण के अन्दर किसी प्रकार की कोई वासना जगा सकता है।

और मादनाख्य महाभाव मतलब की मादन,

"मादयति इति मादन"

वह ऐसा मादक द्रव्य है। मादक समझते हैं? मादक मतलब मत्तवाला कर देना, मत्त कर देना। मत्त कर देना। जो व्यक्ति मत्त हो जाएगा वह क्या कुछ सामान्य

कार्य कर सकता है? आपने नशा करते किसी को देखा होगा, जब वह मत्त हो जाता है, उसको कुछ सुध रहती है कुछ भी? कि मैं कौन हूँ? श्रीकृष्ण यह प्रेम के अन्दर वशीभूत, मत्त हो जाते हैं। *"मादयति इति मादन"*, मत्त।

श्रीकृष्ण कुञ्ज में बैठे इंतज़ार कर रहे हैं राधारानी का... कि कब राधारानी आएँगी। वे इंतज़ार करते-करते, कुछ शुष्क पत्ता भी गिरता है न, तो उससे भी चकाचौंध हो जाते हैं, अभी मेरी स्वामिनी आएँगी। पत्ते के गिरने से उनके मन में उल्लास उत्पन्न हो जाता है, अदम्य उल्लास। पत्ते के गिरने से। किसलिए? राधारानी के इंतज़ार के अन्दर वे इतने मद में अन्धे हो जाते हैं, मदान्ध हो जाते हैं।

राधारानी जब दूर से आ रहीं होती हैं कुञ्ज में, तो उनके जो दिव्य देह से जो स्वर्णकांति धाराएँ छल-छला रही हैं, लह-लहा रही हैं, बह-बहा रही हैं। जो कांति, इतनी तरंग मालाएँ निःसृत बही जा रही हैं, बही जा रही हैं, वह पूरे कुञ्ज प्रांगण को समालोकित कर देती हैं। रोशनी पर रोशनी पूरी छा जाती है कुञ्ज के अन्दर। राधारानी आई नहीं हैं अभी तो बहुत दूर है। पूरा वृन्दावन आलोकित हो जाता है।

श्रीकृष्ण उस मादन रस सिन्धु से प्रवाहित होते हुई कांति के दर्शन करते हैं, तो उसी में मत्त हो जाते हैं। मत्त समझ रहे हैं, मत्त? मत्त मतलब होश ही नहीं रहना, बेसुध हो जाना, विमोहित हो जाना, अपने सुध-बुध ही नहीं रहना, वह होता है मत्त होना। श्रीकृष्ण कांति के दर्शन करके मत्त हो जाते हैं।

साथ में नुपूर की आवाज़ आ रही है राधारानी की। "नुपूर की झंकार"। एक तो कांति ऊपर से नुपूर की झंकार और इसी बात में श्रीकृष्ण एकदम मत्त हो जाते हैं।

अब राधारानी अभी आई नहीं हैं, उनके दर्शन प्राप्त नहीं हुए हैं, तो यह हालत है कि नासिका में उनकी दिव्य गंध चली जाती है, राधारानी की... दिव्य गंध किससे उत्पन्न है? मादनाख्य महाभाव से ही उत्पन्न दिव्य गंध है। जो गंध है न वह भी "मदान्ध" कर देती है। जो कांति है वह क्या कर रही है? "मदान्ध"। जो गंध है वह क्या कर रही है? "मदान्ध"। और जो उनका जो शब्द हैं, मुख से निकले हुए शब्द, वह क्या करते है? "मदान्ध"। जो उनकी झंकार है पायलों की, नुपूर की वह क्या करती है? "मदान्ध"।

अभी तो उन्होंने छुआ नहीं है, अभी तो दर्शन प्राप्त नहीं हुए। यदि राधारानी छू लेंगी तो क्या दशा प्राप्त होगी? इसलिए श्रीकृष्ण इस मादनाख्य महाभाव के मादन प्रेम के फलस्वरूप हमेशा "प्रमत्त" रहते हैं, "प्रमत्त"...। होश ही नहीं रहता। अरे! एक अंग की माधुरी वे सह नहीं सकते, अंग की माधुरी तो छोड़ो अभी तो राधारानी आई नहीं हैं, तो एक अंग की माधुरी ही वे नहीं सह पा रहे, आने की प्रतिक्षा में उनकी केवल कांति के दर्शन हो रहे हैं, उनकी नुपूर की झंकार के दर्शन हो रहे हैं, उनकी दिव्य सुगंध नासिका में प्रवेश कर रही है।

श्रीकृष्ण कहते हैं - "मुझे नहीं पता यह आनन्द किस प्रकार से है राधारानी में, जो मुझे हर पल उनके प्रति झुकाए रखता है।"

ऐसी हैं हमारी राधारानी।

आपने कभी सुना है कि नरसिंह भगवान् लक्ष्मी देवी का ऐसे ध्यान कर रहे हों? वह लक्ष्मी तो काँपती हैं, पास नहीं जा सकती नरसिंह भगवान् के। या नारायण लक्ष्मी के चरण दबाना शुरु कर दें? वे तो पाद सेवन करने की प्रमुख हैं लक्ष्मी। नौ भक्ति के अंग हैं- पाद सेवनम्।

तो हमारी ठाकुरानी जो हैं न ये बिल्कुल अलग हैं। इनके पास जो महाभाव, मादनाख्य महाभाव महासिंधु की स्वरूपा हैं, उसका एक कण जो है वह गोपियों में है। उस कण की प्राप्ति करने के लिए लक्ष्मी भर्सक प्रयत्न करती हैं, उन्हें आज तक प्राप्त नहीं हुआ।

हमारी ठाकुरानी के सामने हज़ारों लक्ष्मियाँ... अरे! कोटि वैकुण्ठों की गिनती नहीं है, कुछ भी नहीं है वो कोटि वैकुण्ठ भी।

एक बारी रुक्मिणी देवी इत्यादि जो हैं, वे ठाकुर जी से सुनती रहती थी गोपियों के बारे में। तो ठाकुर जी जो हैं सोलह हज़ार गोपियों के साथ में है और करते क्या रहते हैं हमेशा?

राधा... राधा... राधा... राधा...
राधा... राधा... राधा... राधा...
राधा... राधा... राधा... राधा...
राधा... राधा... राधा... राधा...

सब, ये जो पटरानियाँ हैं, द्वारकाधीश की जो पत्नियाँ हैं सोलह हज़ार, सबको पता है, "रहते हमारे साथ हैं, पता नहीं राधारानी का ही हमेशा नाम-कीर्तन कैसे करते रहते हैं।" तो बड़ा निवेदन करती हैं कि, "आप इतना करते हो एक बार हमें भी तो मिलाओ", ठाकुरजी कहते हैं- "मिलाऊँगा।" ठाकुरजी सत्यभामा को यहाँ तक कहते हैं- "मेरी मुरली भी यही है, ठीक है, मैं भी यही हूँ। परन्तु द्वारका में रहते-रहते ब्रजलीलाओं को करना तो छोड़ो, मैं उनको ठीक से स्मरण भी नहीं कर सकता, इतनी मनोहर होती हैं ब्रज की लीलाएँ।"

और कहते हैं कि जो राधारानी का, साथ जो उनका रासोत्सव है, रास का स्मरण करते-करते, स्मरण करते-करते, स्मरण भी नहीं कर सकते रास उत्सव, करना तो बहुत दूर की बात है। विह्वल हो जाते हैं सोचकर, रहते द्वारका में है पटरानियों के साथ हैं, दिन भर क्या सोचते रहते हैं, करते रहते हैं -

राधा... राधा... राधा... राधा...
राधा... राधा... राधा... राधा...

एक बारी गोपियों के पास राधारानी के पास लेकर आते हैं ठाकुरजी रुक्मिणी इत्यादि पटरानियों को, कि जाओ दर्शन करो। खुद नहीं जाते साथ में बस। तो वे दर्शन करने जाती हैं; तो हम विस्तार से नहीं बताएँगे; तो पड़ाव पर देखती हैं सखी-मञ्जरी को ही, राधारानी की किसी सखी-मञ्जरी को, उनको देखकर सारी पटरानियाँ प्रणाम कर देती हैं। वे सोचती हैं यही राधारानी हैं। इतना सौन्दर्य, इतना माधुर्य राधारानी की दासियों में, सखियों में है, कि रुक्मिणी आदि उनको देखकर बेहोश हो जाती हैं। तो आप अंदाज़ा लगा सकते हैं कि कहाँ रुक्मिणी और उनसे भी कई निम्न, कहाँ लक्ष्मी... जबकि हैं सब दिव्य, दिव्य वल्लभाएँ, परन्तु रस के तादात्मय में हम आपको बता रहे हैं, लक्ष्मी से कई गुणा ऊँचे रुक्मिणी और रुक्मिणी से तो बहुत ज़्यादा ऊँचे ब्रज लक्ष्मियाँ, और फिर हमारी स्वामिनी का तो क्या कहना, उदाहरण ही नहीं दे सकते।

अरे! प्रत्येक रोम में करोड़ो जिह्वाएँ हों और करोड़ो कल्प तक गान करते रहें तो भी राधारानी के सौन्दर्य सिन्धु का एक कणिका का भी व्याख्यान नहीं कर सकते, ऐसी हैं हमारी स्वामिनी जी। जैसे ही सारी पटरानियाँ जाती हैं दर्शन करने, सखी-मञ्जरियों के दर्शन करती हैं, लगता है यहीं होंगी, इतना सुन्दर तो हमने कभी

सोचा ही नहीं... गोपी को देखकर। कितनी हैं गोपियाँ? अए ! करोड़ों, असंख्य गोपियाँ। फिर एक द्वार पार करके दूसरे द्वार पर जाती हैं, "अब तो राधारानी के दर्शन हो गए", फिर प्रणाम करती हैं। अरे ! यह तो फिर एक और सखी-मञ्जरी है। इतना सौन्दर्य तो सखी-मञ्जरियों में हैं राधारानी की।

हम थोड़ा करके बताएँगे, जब राधारानी के दर्शन होते हैं तो वे बेहोश ही हो जाती हैं, उनकी कांति के दर्शन करके, राधारानी के दर्शन नहीं, राधारानी की कांति के दर्शन करके सारी पटरानियाँ बेहोश हो जाती हैं। ये हमारी ठाकुरानी हैं। हम कोई ऐसी-वैसी की उपासिका हैं? अरे ! *जिनके अधीन सदा ही साँवरो,* वे साँवरे जिनके अधीन सदा रहते हैं। इससे बड़ी सम्पति कोई हो सकती है? अखिल ब्रह्माण्ड नायक, परमात्मा के परमात्मा, जिनके, जिनके आगे बिके हुए खड़े रहते हैं, ये हमारी स्वामिनी हैं। इससे बड़ा धन किसी का हो सकता है? कितने धनी हैं हम सब !

कृष्ण कृष्ण नहीं हो सकते, राधा राधा नहीं हो सकती बिना मञ्जरी के। क्यों? राधारानी तो आसव हैं, मत्त कर देती हैं, रसासव हैं श्रीकृष्ण का। रस के, रस सागर में श्रीकृष्ण के नयन-मीन निरन्तर डूबे रहते हैं। उन्हें बाहर कौन निकालेगा रसासव से? होश में कौन लाएगा? और ये केवल श्रीकृष्ण की दशा नहीं होती, राधारानी की भी ऐसी ही दशा होती है। वे भी श्रीकृष्ण का अधर पान अधिक कर लें तो वे भी मत्त हो जाती हैं। उनको होश नहीं, सुध नहीं रहती। तो जो उन्होंने मादनाख्य महाभाव की सारी सेवा करनी है, राधारानी सेवा के बारे में सोचती हैं कि मैं यह-यह प्रकार से आज श्रीकृष्ण को सेवा करूँगी, तो उसी में वे बिल्कुल मत्त हो जाती हैं, उल्लसित हो जाती हैं सोचकर केवल। और जो सोच रही हैं और अब वह कर नहीं पा रहीं क्योंकि वे खुद आनन्द विवश हैं और दूसरी ओर ठाकुरजी भी आनन्द विवश हैं, तो लीला कैसे होगी? मञ्जरी के होने से तो लीला होती है ब्रज की,

"सखी बिना एई लीला पुष्टी नाहि होए।
सखी लीला विस्तारिया सखी आस्वादय।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला ८.१६४)

पुष्टी नाहि होए, अरे! *पुष्टी... प्रारम्भ नाहि होए।* आनन्द विह्वल हैं, मोहित हैं, एकदम मत्त हैं। तभी तो सुधानिधि में, विलापकुसुमाञ्जलि में प्रार्थना है, ठाकुरानी से तभी तो हमारी हार्दिक प्रार्थना होगी, हम बोलेंगे- "हे राधारानी, हे ठाकुरजी, जब आप दोनों आनन्द विह्वल होंगे तो आपको मेरी ज़रूरत पड़ेगी। कृप्या मुझे सेवा में ले लो।" सरल प्रार्थना है, आप दोनों आनन्द विह्वल होंगे, मुझे सेवा में लगा लेना। इससे सरल और क्या होगा?

पर यह करने के लिए हृदय से... शाब्दिक प्रार्थना अलग है, हृदय से करने के लिए समझना होगा कि मादनप्रेम क्या होता है? यह मत्त होना क्या होता है? यह आनन्द विह्वल होना क्या होता है? आनन्द वैवश्य क्या होता है? आनन्द में चूर होना क्या होता है? आनन्द जड़ता क्या होती है? आनन्द जड़ता कुछ नहीं होती, राधारानी मादनाख्य महाभाववती हैं, वे मत्त कर देती हैं, प्रमत्त कर देती हैं, प्रमत्त, प्रमत्त कृष्ण।

हम किसकी उपासना करते हैं?
श्रीकृष्ण की नहीं, प्रमत्त कृष्ण की। हमारे उपास्य हैं प्रमत्त कृष्ण।

प्रेम सम्पुट में विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर के राधारानी स्वयं बताती हैं, "सब गोपियों का प्रेम तो निरुपाधि है, इतना पवित्र प्रेम है, परन्तु पता नहीं क्यों यह श्रीकृष्ण मुझमें ही हमेशा परम आसक्त रहते हैं जबकि मुझमें तो कोई गुण नहीं है। श्रीकृष्ण मेरे प्रेम को तो सुमेरु पर्वत के समान समझते हैं और बाकी गोपियों के प्रेम को तीन-चार सरसों के दाने के समान।" और यह सरसों के दाने की एक कणिका लक्ष्मी को आज तक प्राप्त नहीं हुई। यह कभी भूल मत करना, जैसे लक्ष्मी-नारायण, जैसे सीता-राम, वैसे ही राधाकृष्ण और रुक्मिणी। रुक्मिणी तो दासी की सुन्दरता को देख कर तो बेहोश हो जाती हैं।

ठाकुरजी के सामने एक बारी गरुड़ जो हैं वे रुक्मिणी के सौन्दर्य की व्याख्या कर रहें थे, "रुक्मिणी इतनी सुन्दर है, ऐसे है।" ठाकुरजी ने कहा- "अरे सखें, हे गरुड़, चुप।"

"यद एष रुप मात्रेण न हारयो हरि"

यह रूपमात्र से कोई हरि को हर नहीं सकता। "मैं हरि हूँ, मैं सबके मन को हरता हूँ, रूप से कोई मुझे थोड़ी न हर सकता है केवल", *"रूप मात्रेण न हारयो हरि"*।

सोलह हज़ार पटरानियाँ हास्य कटाक्ष, हास्य से, मधुरता से, प्रयत्नों से कोशिश करती रहती हैं कि उनमें क्षोभ उत्पन्न कर दें, ठाकुरजी में, *कछु न* । और हमारी स्वामिनी सहज-आनन्द-कादम्बिनी, वे आनन्द की समूह स्वरूपा हैं। ऐसा लगता है मानों अनन्तानन्त सागर आनन्द से भरकर एक मूर्ति में गढ़ दिए गए हों और वे सहज आनन्द कादम्बिनी, आनन्द का समूह स्वरूप। उनके नेत्र में मत्त, उनके नासिका, सुभग नासा देखें तो बह जाएँ, उनके चिबुक के दर्शन करें। आप नहीं बहे, ठाकुरजी बह जाएँ। ऐसा मत्त करे रखती हैं राधारानी, ऐसा सौंदर्य है।

और अभी तो मुखकमल अगर पूरा दर्शन हो जाए, तो क्या दशा होगी ठाकुरजी की? और अभी तो छुआ नहीं है, बोला नहीं है।

दर्शन होते हैं राधाकृष्ण के किनको? मञ्जरियों को। तो हमें दर्शन करने हैं न, तो इन नेत्रों से नहीं दर्शन होंगे। मञ्जरियों के नेत्रों से दर्शन होंगे। मञ्जरियों के नेत्रों में अपने नेत्र को मिला दें।

"अतएव गोपीभाव करि अंगीकार।
रात्रि-दिने चिन्ते राधाकृष्णेर विहार।।
सिद्ध-देह चिन्ति करे ताहाइ सेवन।
सखी भावे पाइ राधाकृष्णेर चरण।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला ८.१८३-८.१८४)

उस भाव को अंगीकार करके ठाकुरजी के दर्शन करें। आप सोचिए राधाकृष्ण की जो लीला है, क्या उसमें कोई दर्शनार्थी भी होते हैं क्या? तो हमें दर्शन कैसे होंगे? जब तक हमारे अन्दर ये... राधारानी में सुतीव्र आकांक्षा होती है श्रीकृष्ण को सुखी करने की, श्रीकृष्ण में सुतीव्र आकांक्षा होती है राधारानी को सुखी करने की, और मञ्जरियाँ, वे भी मत्त रहती हैं युगल को सुखी करने में। तो यह भावना हृदय में बद्ध करनी होगी तो हमें भी वैसे दर्शन होंगे जो मञ्जरियों को होते हैं। दर्शन तो मञ्जरियों के नेत्रों से ही होंगे, मञ्जरियों को ही होंगे। और हमें भी अपने स्वभाव को मञ्जरीमय बनाना होगा।

राधारानी से यही प्रार्थना करनी चाहिए कि मैं कब आपके कटाक्ष के प्रभाव को समझ पाऊँगा... कब मैं आपके प्रेम के प्रभाव को समझ पाऊँगा...